आई.एस.एस.एन. संख्या : 2454–2458
नवरचना NAVRACHNA
www.grefiglobal.org/journals/navrachna.2017
वर्ष 3, अंक 1–2, जून–दिसम्बर 2017, पृ. 60–68

भारत में चीनी उद्योग में श्रमिकों की स्थिति व कार्य दशाएं

छाया*

औद्योगिक श्रमिक से अर्थ उन सभी व्यक्तियों से है जो किसी उद्योग में कुशल अथवा अकुशल श्रमिक के रूप में कार्य कर रहे है। यहाँ उद्योग की परिभाषा में सभी प्रकार के उद्योग व कुटीर उद्योग शामिल है लेकिन उन्हीं श्रमिकों को औद्योगिक श्रमिकों में शामिल किया जाता है जो कि संगठित कारखानों में कार्य कर रहे है तथा जिन पर फैक्ट्री अधिनियम लागू होता है। वे श्रमिक जो कुटीर उद्योगों में काम कर रहे है उन्हें औद्योगिक श्रमिक की परिभाषा में शामिल नही किया गया है। श्रमिकों में असंतोष का अर्थ श्रमिकों में अशान्तिपूर्ण स्थिति है जो कि अनेक समस्याओं के कारण उत्पन्न होती है। साधारणतया ये असंतोष मालिक मजदूर के सम्बन्धों के बिगड़ने से उत्पन्न होते है। असंतोष एक मनोवैज्ञानिक स्थिति है जिसका परिणााम दिखलाई पड़ता है। असंतोष से श्रमिक अपने कार्य से असन्तुष्ट रहता है और इसलिए पर्याप्त अच्छे किस्म का उत्पादन नहीं कर पाता। अतः श्रमिक असंतोष से अन्त में मालिकों को भी हानि ही होती है।

भारत में चीनी उद्योग

भारत चीनी और गन्ना के मूल घर के रूप में अच्छी तरह से जाना जाता है चीनी का उत्पादन गन्ने से किया जाता है। इसकी खोज हजारों साल पहले की गयी थी। भारत और दक्षिण पूर्व एशिया में इसके अस्तित्व के प्रमाण मिलते हैं। भारत की पौराणिक कथाएं इस तथ्य का समर्थन करती है कि इसमें अनेक किवदंतियां शामिल है जो कि गन्ने की उत्पत्ति को दर्शाती रही है आज ब्राजील के बाद भारत गन्ना का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत लम्बे समय तक गन्ने को दबाकर रस निकालने और क्रिस्टल प्राप्त करने की प्रक्रिया के बाद गुड व इससे अन्य उत्पाद प्राप्त करने वाला पहला देश था। 1840 में डच ने उत्तरी बिहार में सफेद चीनी उत्पादन के लिए पहली चीनी निर्माण कम्पनी की स्थापना की थी परन्तु भारत में औद्योगिक इकाई के रुप में पहली चीनी मिल की स्थापना ब्रिटिश काल में उत्तर प्रदेश में 1903 में उप–उष्णकटिबंधीय बेल्टों में स्थापित कुछ वैक्यूम वैन इकाइयों के साथ एक सामान्य गन्ना कुचल क्षमता के साथ स्थापित किया गया था। 1930 तक भारत में 30 चीनी मिलों की स्थापना की जा चुकी थी। जब आधुनिक चीनी उद्योग की स्थापना

---

*शोध छात्रा, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ– 250 004 उ. प्र.।

की गई थी, तो इसे फैक्ट्री की सफेद चीनी से तीव्र प्रतियोगिता का सामना करना पड़ा भारत पहली बार शुरू किया गया था कि गन्ना का उपयोग करने के लिए गन्ने का रस निकालने और क्रिस्टल प्राप्त करने की प्रक्रिया से चीनी का उत्पादन शुरू हो गया। प्रारम्भिक 1930 के लगभग 2/3 गन्ना उत्पादन में वैकल्पिक मिठास जैसे गुड और खांडसारी के उत्पादन के लिए इस्तेमाल किया गया था। जीने के बेहतर मानक और उच्च आय के कारण, मिठास की मांग सफेद चीनी मे स्थानांतरित कर दी गयी है।

1930 के सालों में भारत में आधुनिक चीनी प्रसंस्करण उद्योग का, आगमन हुआ जो चीनी उद्योग को टैरिफ संरक्षण देने से शुरू हुआ था। वर्ष 1930–31 में चीनी मिलों की संख्या 30 से बढ़कर 135 हो गई, जिसमें 100000 मिलियन टन चीनी का उत्पादन हुआ और उन्हें जापानी चीनी से प्रतिकूल प्रतिस्पर्धा मिली जो भारतीय बाजार पर शासन कर रहा था और 1935–36 के वर्षों मे निजी क्षेत्र के गतिशील नेतृत्व के तहत 1.20 लाख टन से 9.34 लाख टन उत्पादन बढ़ गया था।

सरकारी नीति द्वारा रखी गयी शर्तों के कारण उत्पादन का स्तर दीर्घ अवधि के लिए स्थिर नहीं था। भारतीय चीनी उद्योग का विकास एक संगठित रूप में हुआ, जब भारत सरकार ने 6 अप्रैल 1948 को औद्योगिक नीति प्रस्ताव पारित किया, उसके बाद औद्योगिक अधिनियम 1956 जिसके बाद सहयोग के सिद्धान्त को देश के आर्थिक विकास की एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई हुई। वर्ष 1950–51 में औद्योगिक विकास के लिए योजना का युग शुरू हुआ। 1950–51 के वर्ष में 139 कारखाने थे जिनमें से तीन सहकारी मिलों और 136 संयुक्त स्टॉक कम्पनियाँ थी। 1951 में उद्योग अधिनियम की पांच साल की योजना लागू करने के कारण आर्थिक विकास में तेजी से बदलाव हुए। सरकार ने भारत में चीनी उद्योगो को बढ़ाने के लिए कई कदम उठाए और स्वतन्त्रता के बाद ही औद्योगिक क्रान्ति हुई। 1951 के अधिनियम ने दो महत्वपूर्ण बदलाव लाए। 1952 के बाद लाइसेंस प्राप्त क्षमता का एक बड़ा हिस्सा उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, आंन्ध्र प्रदेश और केरल में गया। सरकार ने सहकारी समितियों को प्रोत्साहित किया और इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति गई। उत्तर भारतीय राज्यों में निजी अमीर उद्योगपतियों द्वारा अधिकांश नई मिलों की स्थापना की गई थी। उनके पास गन्ना खेतों का स्वामित्व है और छोटे किसानों से गन्ना भी खरीदा है, और अमीर व्यक्ति मिल मालिक है चीनी मिलों द्वारा छोटे किसानों का शोषण होता है।

औद्योगिक श्रमिकों पर हुए सामान्य अध्ययन

अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर, हेलन आई सफा (1975) ने अपने लेख ''लैटिन अमेरिका के श्रमिक वर्ग की महिलाओं की वर्ग–चेतना'' शीर्षक का प्यूरिटीकों'' में वैयक्तिक अध्ययन किया है जिसमें उन्होंने पाया कि सामान्यतः महिलाओं के कार्यों को द्वितीयक माना जाता है उनके घरेलू श्रम को अनोत्पादक माना जाता है। इसलिए सर्वहारा की चेतना के निर्माण में महिला श्रमिकों की वर्ग–चेतना महत्वपूर्ण नहीं है। सनदरा जे0 कोयेनर (1977) ने अपने लेख ''वर्ग–चेतना एवं उपभोग'' में जर्मनी के वीमर रिपब्लिक का अध्ययन किया और पाया कि वर्ग–चेतना नये सामाजिक वर्गों का निर्माण करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। रोसेटा मॉज कोहेन (1998) ने एक निजी शिक्षा संस्थान''स्थिम कॉलेज मारनल हॉल नॉट हेपटन'' का अध्ययन किया व उसने वर्ग–चेतना और इसके परिणाम सम्बन्धी अपने पेपर में अभिजात शिक्षा का प्रभाव श्रमिक वर्ग की महिलाओं पर देखा और इस अध्ययन

में पाया गया कि अधिकतर सहभागियों ने सफलता को सामाजिक गतिशीलता के सन्दर्भ में नही देखा। वूरनकॉग (1993) ने अपने लेख ''ट्रेड यूनियन वर्ग चेतना और प्रेक्जिस'' का अध्ययन किया उन्होंने अपने शोध पत्र मे साक्षात्कार पद्धति से तथ्य एकत्रित किये और अपने अध्ययन में पाया कि ट्रेड यूनियन और वर्ग–चेतना के बीच गहरा सम्बन्ध है। बारटोकी लिबूनी लारा और लूसियाना ऑरेंज सेरिनो (2012) ने ब्राजील में गन्ना उद्योग के सामाजिक पर्यावरणीय प्रभाव का द्वितीयक स्त्रोत से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर अध्ययन किया। इस अध्ययन का उद्देश्य यह देखना था कि उद्योग के विकास के साथ सामाजिक और पर्यावरणीय सन्तुलन भी कायम रहे। यह शोध प्रकट करता है कि गन्ने की फसल सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभाव को बनाये रखने में सहायक है।

भरत में हीथ और विजय जोशी (1976) ने अधिशेष श्रम के बारे में बम्बई में एक अध्ययन किया था। उन्होंने सुझाव दिया कि रोजगार सृजन और संसाधनों के पुनः वितरण की दिशा में आर्थिक नीति में प्रमुख संशोधन कर तकनीकों, उत्पादों गतिविधियों का उपयोग करके श्रम को प्रोत्साहित करने के लिए सकारात्मक कदम उठाए जाएगे। पी0सी0 गोस्वामी और सी0के0बारा (1970) ने अपने अध्ययन में पाया कि श्रमिक की अधिकता की समस्या भूमिहीन और अकृषि क्षेत्रों से जुड़े परिवारों में ज्यादा थी उन्होंने सुझाव दिया कि बहुकृषि और कुछ अन्य आर्थिक गतिविधियाँ ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक रोजगार उत्पन्न कर सकती है। विनोद कुमार मेहता (1968) ने ''स्वतंत्रता के बाद से भारत में राज्य और श्रम एक समाजशास्त्रीय अध्ययन'' में जो चार औद्योगिक केन्द्रों मे बम्बई, कलकत्ता, मद्रास और अहमदाबाद पर सरकारी प्रकाशनों के तथ्यात्मक और विश्लेषणात्मक आंकड़ो पर आधारित है, में यह दिखाने का प्रयास किया है कि ''भौतिक असुरक्षा की क्षतिपूर्ति करने के लिए मजदूर सांत्वना के लिए धर्म और अंधविश्वास का सहारा लेते है, वे सब कुछ का औचित्य सिद्ध करने के लिए कर्म के दर्शन की ओर बढ़ते है, इस प्रकार राज्य द्वारा प्रस्तुत आधुनिकीकरण, कार्यात्मक विकल्प प्रदान करने या पुराने संस्थानों को बदलने के लिए बहुत कमजोर है''। कुँज पटेल ने मुम्बई के परेल इलाके (1962) के रत्नगिरि ग्रामीण इलाकों में से 15 गांवों के 200 परिवारों में रहने वाले 500 कपड़ा कामगारों का अध्ययन किया। उन्होंने कहा कि कपड़ा उद्योग के लिए रत्नगिरि के निवासी लगभग श्रम शक्ति का एक अतुलनीय स्त्रोत रहे है परन्तु श्रमिकों में नौकरी के प्रति एक सामान्य रवैये से उनमें एक समग्र निराशा की भावना विकसित होती है। वहीं ग्रामीण इलाकों में खराब आर्थिक स्थितियों ने उन्हें इस शहर की समृद्धि के लिए मुम्बई में रोजगार करने के लिए मजबूर किया। जी0के0 ठक्कर ने (1960) ने ''कपड़ा उद्योग की श्रम समस्या' का अध्ययन किया। उन्होनें मुम्बई शहर में विभिन्न आकार के 15 कपास मिलों की श्रमिक समस्याओं का अध्ययन किया। श्रमिक समस्याओं का गहन अध्ययन करते हुए उन्होने कहा कि सभी घटनाओं में स्वतन्त्रता के बाद कई महत्वपूर्ण घटनाएँ हुई हैं जैसे कि भर्ती, प्रबंधन, कानूनी ढांचे, ट्रेड यूनियनवाद, विवादों के निपटारे के लिए मजदूरी और मशीनरी का निर्धारण करने की विधियों और इन परिवर्तनों ने उद्योग की श्रमिक समस्याओं को पूरी तरह से नया रूप दिया है जिससे श्रम का अच्छी तरह से प्रबंधन होता है। एन.आर. सेठ ने जुलाई 1956–जुलाई 1958 के मध्य गुजराती राज्य के राजनगर जिले में ''ओरिएंटल'' नामक एक कारखाने मे श्रमिकों का एक सामाजिक अध्ययन किया। उन्होंने कहा कि ''यह माना जाता है कि पारंपरिक संस्थान आर्थिक विकास

के रास्ते में बाधा है लेकिन ओरिएंटल के अध्ययन से पता चलता है कि यह सभी मामलों में ऐसा नहीं है इसलिए इन समाजों में भी औद्योगिक समाज के मूल्य विकसित होने लगते हैं जिससे कि समाज के पारम्परिक और तर्कसंगत मानदण्डों के बीच का अंतर पैदा होता है। सुषमा विष्णी और भरेस, के0 आर0 शाह (2007) ने अपने लेख ''कॉरपोरेट प्रदर्शन पर कार्यशील पूंजी प्रबंधन नीतियों का प्रभाव एक अनुभवजन्य अध्ययन'' में यह बताया है कि पारंपरिक रूप से यह देखा गया है कि अगर कोई कंपनी बड़ा मुनाफा और नुकसान के लिए अधिक जोखिम लेने की इच्छा रखती है तो इसकी बिक्री के सम्बन्ध में इसकी कार्यशील पूंजी के आकार में कमी आती है। यदि यह उसकी तरलता में सुधार करने में दिलचस्पी रखता है, तो यह अपने कार्यशील पूंजी के स्तर को बढ़ाता है। हालांकि इस नीति के परिणामस्वरूप बिक्री की मात्रा में कमी आने की सम्भावना है। इसलिए एक कंपनी को तरलता और लाभप्रदता के बीच एक संतुलन चाहिए।

भारत में चीनी उद्योग के श्रमिकों पर हुए अध्ययन

खुशबु सिंह और वेनिशा पंडिता आदि (2015) ने पश्चिमी उत्तर प्रदेश के चीनी मिलों में काम कर रहे उत्पादन लाइन श्रमिकों और प्रशासन कर्मचारियों की मुख सम्बन्धी स्वास्थ्य स्थिति का आकलन करने के लिए चीनी मिल कारखाने के 600 कर्मचारियों का मल्टीस्टेज दैव निदर्शन पद्धति से चयन किया और पाया कि चीनी मिल कारखाने के श्रमिकों के मौखिक स्वास्थ्य से समझौता किया जाता है जो मुख्य रूप से अपने काम के समय और मौखिक स्वास्थ्य के महत्व के बारे में कम जागरूकता स्तर के कारण कार्य के दौरान चीनी धूल के सम्पर्क के कारण हो सकता है अतः मिल श्रमिकों को मुख सम्बन्धी स्वच्छता की आदतों और स्वच्छता रखरखाव के बारे में शिक्षित करने की आवश्यकता है इसके अलावा सरकार के साथ मिल मालिकों को भी नियमित रूप से स्क्रीनिंग और दंत उपचार कैंपों के आयोजन के लिए दंत चिकित्सा संस्थानों के साथ मिलकर सक्रिय रूप से कार्य करना चाहिए। इसके अलावा, फैक्ट्री परिसर के भीतर दंत चिकित्सा क्लिनिक की स्थापना वर्तमान परिदृष्य में स्पष्ट रूप से सुधार कर सकती है। डॉ0 गणेष सालुन्के (2015) ने ''सहकारी चीनी मिल महाराष्ट्र के कार्य पर्यावरण और इसके कार्य संन्तुष्टि पर प्रभाव'' का अध्ययन किया। इस अध्ययन से पता चलता है कि कार्यस्थल पर्यावरण कर्मचारियों के लिए उपयुक्त है व चीनी उद्योगों में कर्मचारियों की नौकरी के प्रति सन्तुष्टि को काफी प्रभावित करता है। अनुप यादव और रेणु दत्ता (2014) ने हरियाणा की पानीपत चीनी मिल का भूमिगत जल (पीने के पानी) के भौतिक रासायनिक गुणों पर पर होने वाले प्रभाव का दैव निदर्षन के द्वारा अध्ययन किया तथा यह पाया कि चीनी मिल के 10 किमी0 के क्षेत्र में पानी के पैरामीटर अनुमन्य सीमा से ज्यादा बढ़ चुके थे जो मानवीय स्वास्थ्य के लिए चुनौती है। आदित बी. कुचनर (2013) ने द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित एक वैयक्तिक अध्ययन द्वारा महाराष्ट्र में गन्ना उद्योग की सम्पूर्ण तकनीकी प्रदर्शन का अध्ययन किया व महाराष्ट्र मे 2012–13 से 2019–20 तक के काल खण्ड में गन्ना उद्योग के सम्बन्ध में सतत् तकनीकी प्रदर्शन पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। जिससे यह स्पष्ट होता है कि उद्योगो में तकनीकी प्रदर्शन की स्थिरता चीनी उद्योग के विकास से महत्वपूर्ण रूप से जुड़ी है। रामना रेड्डी और हरि प्रसाद रेड्डी (2012) ने एक चुनिंदा चीनी उत्पादन इकाइयों के लिए ''जेड स्कोर मॉडल'' की वित्तीय स्थिति पर एक लेख लिखा व निष्कर्ष निकाला कि चीनी उद्योग एक कृषि आधारित विनिर्माण उद्योग है इसका वित्तीय प्रदर्शन न केवल इसकी वित्तीय

गतिविधियों पर निर्भर करता है बल्कि जलवायु परिस्थितियों पर भी होता है। इनके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि चलितता का काम कर रहे पूंजी कारोबार की दक्षता ओर चित्तूर सहकारी चीनी लिमिटिड प्रूडेंशियल चीनी कॉपेरेशन लि0 और श्री. वेंकटेश्रवर सहकारी चीनी कारखाने लि0 की योग्यता की स्थिति अच्छी नहीं है इनका जेड–स्कोर का विश्लेषण खराब वित्तीय प्रदर्शन को दर्शाता है जिसमें चिटोर की सहकारी चीनी मिल दिवालिया हो रही है। हालांकि जेड़ स्कोर वर्ष 2004 से 2010 के रूझाानों में वृद्धि कर रहा था, यह दर्शाता है कि कंपनी को वित्तीय प्रदर्शन के बारे में पता चलने पर इसको बढ़ाने के लिए सुधारात्मक उपायों को ले लिया गया।

मार्टिना आर. नोरोन्हा और दिलीप सिंह ठाकोर (2012) ने दक्षिण गुजरात में चीनी कारखानों की वित्तीय व्यवहार्यता के मामले का एक वैयक्तिक अध्ययन किया और यह बताया कि गन्ना सबसे अधिक बहुमुखी फसल है जो चीनी मिलों को अपने उत्पादों में विविधता लाने के लिए जबरदस्त क्षमता प्रदान करती है। प्रौद्योगिकीय ज्ञान में प्रगति ने चीनी उद्योद में गन्ने के कई उपयोगों के लिए क्षमताएँ खोल दी है और अब इसे ऊर्जा के तरल ईंधन, बिजली उत्पादन या सहगमन, कागज और अक्षय ऊर्जा के अक्षय संसाधनों की तरह कई उत्पादों जैसे कागज, कागज बोर्ड, प्रोटीन खाद्य पदार्थ और पशु आहार, जैविक रसायनों, जैव खाद्य और चीनी के लिए कच्चे माल के रूप में देखा जा सकता है। अतः गन्ने की वास्तविक कीमत केन्द्र सरकार द्वारा तय वैधानिक न्यूनतम कीमतों की तुलना में कहीं अधिक होती है। चीनी उद्योग की प्राकृतिक वृद्धि के लिए गन्ने की कीमतों को वसूली प्रतिशत आदि के आधार पर तय किया जाना चाहिए जो उन्होंने हासिल किया है। इससे गन्ने की लागत कम करने में मदद मिलेगी यह मिलों को गन्ने की आपूर्ति की गुणवत्ता मे सुधार करने में भी मदद करेगी। अतः यह मौसम के दौरान कुचल के समान मात्रा की मदद से चीनी उत्पादन में वृद्धि करेगा। इसलिए राज्य की व्यवस्था को गन्ने की कीमतों को आवश्यक रुप से तार्किक बनाये जाने की सलाह दी जाती है, जो भारतीय चीनी उद्योग के गुणात्मक विकास के लिए आवश्यक है। आर. अगयर्केनी (2010) ने दक्षिण भारतीय चीनी कंपनियों में कार्यरत वित्तपोषण के प्रबन्धन का अध्ययन किया व पाया कि चीनी उद्योग प्रौद्योगिकी उन्नयन के महत्वपूर्ण प्रभाव पर जोर देता है और किसानों, निर्माताओं और सरकारों को विभिन्न उत्पादन पर आधारित सुझाव प्रदान करता है। एस0एस0राजू, पी0 सिनोज ओर पी0के0जोशी (2009) ने वर्ष 2008–2009 में द्वितीयक आंकड़ो का प्रयोग करते हुए जैव ईंधन के सतत् विकास की सम्भावना और चुनौतियों का अध्ययन किया व पाया कि चीनी उद्योग से भारत और अमेरिका में सामाजिक व आर्थिक लाभ हुआ है यह शोध प्रदर्शित करता है कि जैव ईंधन खाद्य सुरक्षा सामाजिक कल्याण और पर्यावरण को प्रभावित करता है। राहुल कुमार (2007) ने अपने चीनी उद्योग अध्ययन के विष्लेशण के आधार पर बताया कि उद्योग को एक अप्रिय अवधि का सामना करना पड़ रहा है न केवल चीनी उद्योग, लेकिन लगभग कृषि उद्योग भी मुश्किल समय का सामना कर रहा है। सी0एम0 जवालगी और यू0एम0 भूषी (2007) ने भारतीय चीनी उद्योग के अध्ययन से यह बताया कि ग्रामीण विकास पर असर डालने के लिए गन्ने और चीनी का क्षेत्र भारतीय कृषि क्षेत्र के महत्वपूर्ण हिस्से है। चीनी उद्योग ने खुद को ग्रामीण विकास का एक नाभिक साबित कर दिया है खासकर उसके आस–पास के क्षेत्रों में और स्वंय के लिए राष्ट्रीय कंपनी में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। भारतीय चीनी उद्योग का प्रदर्शन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कारकों पर निर्भर करता है। अध्ययन में चीनी उद्योग के वर्तमान राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर और प्रदर्शन पर उनके प्रभाव पर चर्चा की गयी है। इसके अलावा यह एक ऐसा दृष्टिकोण है जो वास्तविकता का कारण देखने को छोड़ता

है और सामाजिक तकनीकी प्रणाली के गतिशील व्यवहार की जांच के लिए मात्रात्मक साधनों का और उनकी प्रतिक्रिया नीति का भी उपयोग करता है। एस0 बेंनी बसवाराज (2007) ने अंतरराज्यीय चीनी कारखाना क्षमता की तुलना का अध्ययन किया है व सूक्ष्म उप्पादक राज्यों की औसत दक्षता रैकों की तुलना उनके सापेक्ष शक्कर उत्पादक राज्यों की पहचान के लिए अपने औसत तकनीकी दक्षता स्कोर के आधार पर की है। पर्यावरणीय विश्लेषण मॉडल का उपयोग करते हुए अध्ययन ने सूक्ष्म उत्पादन वाले राज्यों की पहचान की और पता चला कि बिहार 12.28 प्रतिशत तमिलनाडू 10.22 प्रतिशत, पंजाब 8.52 प्रतिशत, कर्नाटक में 6.12 प्रतिशत, उत्तरांचल 5.89 प्रतिशत, हरियाणा में 5.54 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ 3.15 प्रतिशत, मध्य प्रदेश 3.27 प्रतिशत, उडीसा 1.95 प्रतिशत और गोवा 1.27 प्रतिशत चीनी उत्पादन के साथ दिए गए इनपुट के जरिए बढ़ा सकता है।

हरीष दामोदारन और हरवीर सिंह (2007) ने उत्तर प्रदेश में चीनी उद्योग का अध्ययन किया इस अध्ययन का उद्देश्य उत्तर प्रदेश में क्षेत्रीय प्रारूप तथा चीनी उद्योग के उद्विकास था। इस अध्ययन के लिए 1951 ई0 में द्वितीयक स्त्रोतो से डाटा संकलन किया गया जो भारतीय चीनी उद्योग समिति नई दिल्ली और उत्तर प्रदेश गन्ना आयुक्त कार्यकाल लखनऊ से लिया गया। इस शोध से प्रमाणित होता है कि राज्य में समकालीन समय में उद्योगो में निवेश बढ़ा है तथा रोजगार एवं आय के अवसर ग्रामीण क्षेत्र में पहुंचे है।

जे0 जिवरनाथम (2006) ने गन्ने के माध्यम से समृद्धि का अध्ययन किया और कहा है कि अगर गन्ने की खेती वैज्ञानिक आधार पर और चीनी मिलों की आपूर्ति के आधार पर की जाती है, तो यह किसानों के लिए बहुत लाभदायक है। उन्होंने सुझाव दिया कि चीनी मिलों को गन्ने की खेती पर किसानों का आवश्यक मार्गदर्शन करना चाहिए व गन्ने की गुणवत्ता वाले बीज साम्रगी की आपूर्ति, वैज्ञानिक आधार पर सांस्कृतिक कार्यो को पूरा करने और फसल काटने व न्यूनतम मूल्य की व्यवस्था करनी चाहिए। संघमित्रा दास और दिलीप मुखर्जी (2005) ने भारतीय चीनी उद्योग में स्वामित्व और संविदात्मक अक्षमता का अध्ययन किया और अध्ययन मे अलग–अलग स्वामित्व या प्रबन्धन वाले भारतीय चीनी कारखानों द्वारा गन्ना की खरीद में विकृतियों के सम्पर्क के साक्ष्य की जांच की गई तथा पाया कि दो सबसे बड़े चीनी बनाने वाले भारतीय राज्य उत्तर प्रदेश और महाराष्ट्र सम्बन्धित गन्ना मूल्य विकृतियों, गन्ना गुणवत्ता, तकनीकी परिवर्तन और चीनी की कीमतों में बदलाव के प्रभाव में उत्पादक किसानों के हित डूब जाते हैं। डॉ0एस0डी0 टालेकर (2005) ने अपने अध्ययन ''कार्यकारी पूंजी का प्रबन्धक'' में मराठा क्षेत्र में चीनी मिल के सामाजिक, राजनीतिक प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने 1991 से 2001 के बीच 14 चीनी मिलों से आंकडे संकलित किये। उनका यह शोध प्रमाणित करता है कि महाराष्ट्र में सहकारी चीनी उद्योग ग्रामीण अर्थव्यवस्था एवं सामाजिक, राजनीतिक सम्बन्धों को सीमित करता है। आर0एन0 गवाडे (2004) ने अपने अध्ययन ''भारत में सहकारी गन्ना संकट एवं नीति विकल्प'' में तर्क प्रस्तुत किया कि सहकारी गन्ना फैक्ट्रियों के सतत् विकास के लिए गन्ने की पूर्ति एवं पर्याप्त मात्रा आवश्यक है उनके अनुसार इसके लिए गन्ने की पेराई सत्र के 180 दिन तक उपलब्धता होनी चाहिए इसलिए प्रत्येक सहकारी चीनी मिल के कृषि विभाग को गन्ना उत्पादन क्षेत्र में गन्ना उगाने में महत्वपूर्ण रूचि लेनी चाहिए उन्हें गन्ने की खेती के लिए सहकारी सिंचाई का विकास करना चाहिए व गन्ने की खेती के लिए सिंचाई की आधुनिक तकनीकों जैसे टपक सिंचाई,

स्पिरिंकल आदि का प्रयोग करना चाहिए। बी. बी. माने और एच. एन. पाटिल (2002) ने ''मंजरा सहकारी चीनी कारखाने के प्रभाव'' का अध्ययन किया और बताया कि मंजरा चीनी कारखाने ने लाभार्थियों के खेतों पर पूंजी निर्माण पर सकारात्मक प्रभाव पैदा किया और चीनी कारखानों के कमान क्षेत्र के बाहर स्थित अपने समकक्ष किसानो की तुलना में इसी तरह कारखाने द्वारा किसानों को ऊँची कीमत देकर उनकी आय के स्तर में समुचित वृद्धि की गयी व किसानों को कृषि के मैकेनाइजेशन में निवेष करने के लिए प्रेरित किया गया ताकि खेती का संचालन समय पर किया जा सके और जोरदार फसलों के विकास के लिए अनुकूल स्थिति हो सके। शंकर सिद्धार्थ (2001) ने शाहबाद सहकारी चीनी मिल्स लिमिटिड में प्रबन्धकीय अभ्यास का अध्ययन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि सहकारी चीनी मिलों में प्रबंन्धकीय प्रथाएँ चल रही हैं जैसे कि शेयरधारकों की उदासीनता और सरकार के अनावश्यक अनुमान के साथ प्रबन्धको की प्रतिनियुक्ति, कम संगठनात्मक छवि आमतौर पर समग्र खराब प्रदर्शन के लिए जिम्मेदार है इसके अलावा, सहकारी चीनी मिलों को एक सच्चे सहकारी व्यापार उद्यम से सरकार के रूप में चलाने की तरह दिखते है। एस. सी. लहरी (1995) ने अपने अध्ययन ''चीनी संकुल एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था'' मे तर्क प्रस्तुत किया कि चीनी संकुल को देश में प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है चीनी संकुल ना केवल चीनी कारखानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करते है बल्कि ग्रामीण भारत में अंतरिक रोजगार के अवसर भी पैदा करते है बायोगैस और गुड़ आदि चीनी मिलों के महत्वपूर्ण उत्पाद होते है तथा बायोगैस व कागज के उत्पादन आदि में एक महत्वपूर्ण अक्षय संसाधन है। ए0 जोशी (1989) ने अपने लेख में बताया कि उत्तर प्रदेश में पिछले कुछ दशकों से उद्योग विभाग संरचनात्मक परिवर्तन से गुजर रहा है। यह केवल उद्योगों में ही नहीं बल्कि गन्ना उद्योगों में भी हो रहा है। एस. एन. भट्टाचार्य (1980) ने अपने अध्ययन ''भारत में ग्रामीण औद्योगिकीकरण'' में प्रदर्शित किया कि गन्ना उद्योग और कृषि परस्पर सम्बन्धित है व ग्रामीण क्षेत्रों में गन्ना उद्योग की स्थापना ने ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों की ओर प्रवजन को घटाया है तथा गन्ना उद्योग ने रोजगारों के अवसर पैदा किये है तथा किसानों को बिचोलियों से बचाया है और किसानों की क्रय क्षमता में वृद्धि की है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट है कि भारत में चीनी उद्योग एक कृषि आधारित विनिर्माण उद्योग है इसका कुशल प्रबन्धन न केवल इसकी वित्तीयदगतिविधियों पर निर्भर करता है अपितु जलवायु परिस्थितियों का भी इस पर प्रभाव पडता है। गन्ना एक कृषि उत्पाद है जो भारत के विभिन्न राज्यों में विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों में उगाया जाता है। अतः चीनी उद्योग में इसका उपयोग चीनी के अतिरिक्त अन्य विभिन्न उत्पादों के लिए भी किया जाता है। इसका महत्व किसानों के लिए एक कैश फसल के रुप में किया जाता है जो उनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति को सुदृढ करने में सहायक होता है परन्तु यह उद्योग विभिन्न प्रकार की समस्याओं से जूझ रहा है। इनमें से एक राज्य सरकार द्वारा न्यूनतम मूल्य निर्धारण की समस्या है। इसका निर्धारण वैज्ञानिक व तार्किक आधार पर किये जाने की आवश्यकता है। साथ ही सार्वजनिक क्षेत्र की चीनी मिलों के प्रबन्धन में भी समुचित सुधार करने की आवश्यकता है। अध्ययनों से पता चलता है कि चीनी मिलों के आस–पास भूमिगत जल में प्रदूषण की मात्रा में बढोतरी देखी गयी है। साथ ही गन्ने के अवशेष को जलाने से भी प्रदूषध उत्पन्न

होता है। श्रमिकों में स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं भी पायी गयी हैं। अतः इन सभी कारकों पर सुस्पष्ट नीति बनाने व उसको कार्यान्वित करने की अत्यधिक आवश्यकता है।

सन्दर्भ–ग्रन्थ

सिंह, खुशबु और वेनिशा पंडिता आदि 2015: ''क्या चीनी मिल श्रमिकों के ओरल हेल्थ में समझौता किया जा रहा है?'' *जे. क्लिन. डायग्न. रिस.*, जून।

यादव, अनुप और रेणु दत्ता 2014: ''आसपास के क्षेत्र के भूजल के भौतिक रासायनिक विशेषताओं पर चीनी मिल का प्रभाव'', *पर्यावरण विज्ञान की अन्तर्राष्ट्रीय अनुसंधान पत्रिका,* खण्ड 3, नं0 6, पेज: 62–66

कुचनूर, आदिति बी. 2013: ''तकनीकी प्रदर्शन का विश्लेषण: महाराष्ट्र में गन्ने उद्योग का एक व्यैक्तिक अध्ययन'', *एशियाई जम्मू प्रबंधन,* जुलाई – सितम्बर खण्ड 4, नं0 3, पेज: 205–222

रेड्डी, एन.वी.आर. रामना और हरि प्रसाद रेड्डी 2013: ''चयन गन्ना निर्माण इकाइयों की वित्तीय स्थिति: जेड़ स्कोर मॉडल'', इन्टरनेशनल जरनल आफ एजुकेशन एण्ड रिसर्च, अंक 1, खण्ड 1, जनवरी।

नोरोन्हा, मार्टिना आर. और दिलीप सिंह ठाकोर 2012: ''दक्षिण गुजरात में चीनी कारखानों की वित्तीय व्यवहार्यता एक वैयक्तिक अध्ययन'', *इन्टरनेशनल जरनल आफ मल्टीडिसिपनलीनरी रिसर्च,* अंक 2, खण्ड 2, पेज 387–399।

लिबूनी, लोरा बारटोकी और लुसियाना ऑरेज सेरिनो 2012: ''गन्ना उद्योग का सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभाव'' *शोध अनुसंधान पत्रिका प्रवृत्तियां और रणनीतियां,* खण्ड 4, नं0 5, पेज: 1–27।

अंगयर्कैनी, आर. 2010: *''दक्षिण भारतीय चीनी उद्योग में चयनित चीनी कंपनियों में कार्य वित्त का प्रबन्धन''* अप्रकाशित पी0एच0डी0 थीसिस, भहरीर विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर।

राजू, एस. एस. और पी. सिनोज आदि 2009: ''जैव ईधन के सतत् विकास संभावनाएँ और चुनौतियाँ'', *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक* खण्ड 44, नं0 52, दिसम्बर जनवरी पेज, 65–72।

दामोदरन, हरीश और हरवीर सिंह 2007: ''उत्तर प्रदेश में चीनी उद्योग चावल गिरावट और पुनरूद्धार'', *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक* सितम्बर, पेज: 3952–3957.

जिवरनाथ, जे, 2006: ''गन्ने के माध्यम से समृद्धि,'' *किसान विश्व,* खण्ड 3, नं0 4, पेज: 29.

करीमूला, आशा, एस, 2006: ''चीनी उद्योग के लिए आर्थिक विकास'', *किसान विश्व,* अप्रैल खण्ड 33, नं 4 पेज:28

दास, संघमित्रा और दिलीप मुखर्जी 2004: ''स्वामित्व ओर संविदात्मक अक्षमता: भारतीय चीनी उद्योग में सहकारी व निजी फैक्टिरियो के कार्य निष्पादन की तुलना'', Indian Statistical Institute, Delhi, Planning Unit, Discussion Paper 04-06, April, 2004.

टालेकर, एस डी, 2005: *कार्यशील पूँजी का प्रबंधन,* खोज प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज: 25

गवाडे, आर, एम, 2004: ''भारत और नीति विकल्पों में: चीनी सहकारी समितियों का संकट'' अर्थशास्त्र विभाग के ओस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत पेपर, अप्रैल, पेज: 4–5

माने, बी0बी0 और पाटिल, एच0एन0 2002 : ''पूँजी निर्माण पर एक सहकारी चीनी कारखाने पर मंजरा का असर'' जुलाई।

शंकर, सिद्वार्थ 2001: ''प्रबंधकीय अभ्यास– शाहबाद सहकारी चीनी मिल्स लिमिटिड़ का एक अध्ययन'', शाहबाद निशान भारतीय हरियाणा सहकारी समीक्षा, अक्टूबर।

कोहेन, रोसेटा मॉन 1998: ''अभिजात शिक्षा का प्रभाव'' *अमेरिका रेजूकेन्स जनरल,* खण्ड 35, नं0 3, पेज: 356–375.

लहरी, एस.सी. 1995: ''चीनी परिसरों और ग्रामीण अर्थव्यवस्था'', *योजना,* खण्ड 39, नं0 4, पेज–25–30

वूरनकॉग 1993: ''ट्रेड यूनियन वर्ग चेतना और पेजिक्स''

जोशी, ए0 1989: ''उत्तर प्रदेश में पिछले कुछ दशकों से उद्योग विभाग में संरचनात्मक परिवर्तन'', *ग्रीक इन्स्टयूट ऑफ डवलपमेन्ट स्टीडीज,* खण्ड: 6, नं0 3,

भट्टाचार्य, एस0एन0, 1980: *भारत में ग्रामीण औद्योगिकीकरण,* नई दिल्ली: बी0आर0 प्रकाशन हाउस।

कोयेनर, सनदरा जे0 1977: ''वर्ग चेतना एंव उपभोग'', जनरल ऑफ सोशल हिस्ट्री, खण्ड:10, पेज: 310–331

जोशी, हीथर और विजय जोशी 1976: *अधिशेष श्रम और शहर: बॉम्बे का एक अध्ययन*, नई दिल्ली: आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, पेज–172.

सफा, हेलन आई. 1975 : ''लैटिन अमेरिका की श्रमिक वर्ग की महिलाओं की वर्ग चेतना: प्यूरिटो रिको का एक व्यैक्तिक अध्ययन'' *पालिटिक्स एण्ड सोसायटी*, वाल्यूम 5, अंक 3, पेज 377– 385।

गोस्वामी, पी0सी0 और सी0के0 बारा 1970: ''ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमिकों की मांग'' खण्ड 25 नं0 3, पेज: 52–64.

मेहता, विनोद कुमार 1968: *आजादी के बाद भारत में राज्य और श्रम एक समाजशास्त्रीय अध्ययन*, अप्रकाशित पी.एच.डी. थिसिस विश्वविद्यालय बॉम्बे, पेज: 519.

पटेल, कुंज 1963: ''औद्योगिक बॉम्बे में ग्रामीण श्रम'', बाम्बे: पापुलर प्रकाशन, पेज: 1–24.

ठक्कर, जी0के0 1962: *कपड़ा उद्योग की श्रम समस्या*, वोरा, पेज–9.

सेठ, एन.आर. 1968: *एक भारतीय कारखाने का सामाजिक ढांचा*, मानचेस्टर: मानचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस।